बस्तर की वनवासी संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग : साजा वृक्ष

- लेखक : DAKSHIN KOSAL TODAY DESK
- तारीख : February 01, 2021

बस्तर में निवासरत विभिन्न जाति एवं जनजाति के लोग प्रकृति आधारित जीवन-यापन करते है। ये लोग आदिकाल से प्रकृति के सान्निध्य में रहते हुये उसके साथ जीने की कला स्वमेव ही सीख लिए हैं। यहाँ के रहवासियों का मुख्य व्यवसाय वनोपज, लघुवनोपज संग्रहण कर उसे बेच कर आय कमाना है। इसके अनुपातिक दोहन के लिये कई तरह के नियम बनाये गये हैं, जिससे यहाँ का रहवासी अनुशासित रहकर उतना ही उपभोग करता है, जितना की उसकी आवश्यकता होती है।

प्रकृति पूजक बस्तर के लोगों द्वारा अनुपातहीन विदोहन से बचने के लिये कई तरह के वृक्षों को अपनी धार्मिक मान्यताओं से जोड़ लिया है। कई तरह के वृक्ष सदैव से पूज्य हैं जैसे तुलसी, चन्दन, बेल, पीपल वट आदि इसी तरह बस्तर के निवासियों ने भी कुछ वृक्षों को धार्मिक आस्था से जोड़ कर पूज्य मान लिया है और यही वृक्ष आदिम समाज के धार्मिक आस्था के केन्द्र बन कर देव तुल्य पूजे जाते हैं। जिनमे प्रमुख रूप से साजा वृक्ष का नाम आता है, जिसे बोलचाल की भाषा में बस्तर के लोग “आदन” कहते है और गोन्डी बोली में “मर्दमरा” (साजा वृक्ष) कहा जाता है।

साजा वृक्ष सामान्यतः साजा या साज के नाम से जाना जाता है, बस्तर में इसका प्रचलित नाम आदन है। इसका सम्बन्ध काम्ब्रेटासीया परिवार से है और वैज्ञानिक नाम टर्मिनालीया टेमेन्टोसा है। यह उष्णकटिबन्धीय पर्णपाती वन का प्रमुख वृक्ष है। यह बस्तर के जंगलों में गाँव के किनारे घर के बाड़ियों में बड़ी संख्या में पाया जाता है। आकार में यह वृक्ष 10 से 15 मीटर तक ऊंचा और घना, छायादार होता है। इसके पत्तों सामान्य से कुछ लम्बे व चौड़े होते हैं। इसके फूल सफेद रंग के छोट-छोटे गुच्छे में अप्रैल से जून के बीच फूलने लगते हैं, अगस्त और फरवरी के मध्य फल लगता है, जो दो से तीन से. मी. का पाँच फलक वाला होता है।

इस वृक्ष की लकड़ी बहुत ही मजबूत मानी जाती है। इससे नांगर (हल) मोंगरीपाटी (मुख्य मेयार) बैलगाड़ी, काण्डा (छत की

लकड़ी) आदि बनाया जाता है। सूखी लकड़ी का उपयोग इंधन के रूप में किया जाता है। इस वृक्ष को जब तक आवश्यक नहीं होता है, तब तक नहीं काटा जाता क्यांकि आदिम समाज इस वृक्ष में देवताओं का वास मानता है। यदि किसी कारणवश काटना आवश्यक हो तब वृक्ष में स्थित राव बाबा की विधिवत पूजा कर काटने की अनुमति ली जाती है, तब काटा जाता है।

दक्षिण बस्तर में इस वृक्ष में "भोंरमदेव" वास करते हैं, ऐसी मान्यता है। इसी तरह उत्तर बस्तर में "रावदेव" का वास माना जाता है, इसलिये इसे "राव रूख" भी कहा जाता है। परन्तु जितने भी देवताओं के विग्रह आंगा देव होतें है, मान्यता के अनुसार उन सभी देवताओं का वास इस वृक्ष में माना जाता है। इस वृक्ष के समीप महिलाओं का जाना वर्जित है।

वनवासी समाज में इस वृक्ष का महत्व तब ओर बढ़ जाता है, जब इसके लम्बे सीधे तने से आंगा देवता का विग्रह बनाया जाता है। वैसे तो आदिम समाज आंगा देव बनाने के लिये बेल वृक्ष के तने का उपयोग करता है। परन्तु एक स्थान विशेष जहाँ से उस आंगा देव का विग्रह बनाया जाता है, वहाँ पर उस समय बेल का वृक्ष नहीं होता या होता है भी तो वह आंगा देव बनाने के लिये परिपक्व नहीं होता तब वनवासी समाज सीधे और लम्बे साजा (आदन) के तने से आंगा देव के विग्रह का निर्माण करता है।

इसके लिये वो सबसे पहले जिस देवता का विग्रह बनाना होता है, उस देवता के सिरहा को देव बैठा कर उसे बताते हैं कि जहाँ से उनका विग्रह बनाया जाता है, उस स्थान में बेल वृक्ष नहीं है। तब उस देव के द्वारा उपाय सुझाया जाता है कि यदि बेल वृक्ष नहीं है तो आदन (साजा) वृक्ष से विग्रह का निर्माण किया जाय। उसी देवता द्वारा किस जगह के वृक्ष से विग्रह बनाया जायेगा, यह भी बताया जाता है। उस स्थान पर किस किस देवता का वास है, उनकी पूजा किस प्रकार की जायेगी।

वृक्ष काटने की अनुमति लेने के लिये किस तरह की पूजा और बलि दी जायेगी। यह सब जान लेने के बाद वनवासी समाज उन सब उपायों को करता है और उस देव के आंगा देव के विग्रह का निर्माण करता है। किसी भी नये विग्रह के निर्माण के बाद एक भौंरा जैसा कीड़ा उस पर जब तक छेद नहीं बना लेता तब तक देवता उस विग्रह पर आरूढ़ हुआ नही माना जाता। वनवासी समाज का यह साजा (आदन) देव वृक्ष है।

साजा (आदन) वृक्ष

इस वृक्ष की पवित्रता का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वनवासी समाज के साल भर होने वाले देव कार्यो में मर्दआकिंग (आदन पत्तों) का होना अनिवार्य है। देवताओं का आह्वान करने के लिये चावल के छोटे-छोटे ढेर बनाना हो, जिसे

“पूजीं मडांना” कहते हैं, या देवताओं को भोग लगाना हो या फिर देवताओं को शराब तर्पण करना हो सभी कार्यों के लिये साजा या आदन पत्तों की जरूरत होती है।

वनवासी समाज अपने समस्त कार्य करने के पहले अपने देवताओं से अनुमति प्राप्त करता है, उन्हे साक्षी बनाता है या वह कार्य कैसे सम्पन्न होगा इसका उपाय पूछता है। इसके लिये उसे अपने गाँव के सिरहा को बार-बार देव बिठाना पड़ता है। देव आने से पहले सिरहा जब तक हाथ में मयूर पंख या आदन (साजा) का पत्तों नहीं रखता तब तक उस पर देवता आरूढ़ नहीं होते, ऐसी मान्यता है कि सिरहा मयूर पंख या आदन के पत्तों में ही देवता का आह्वान करता है या यह कहा जा सकता है कि देवता या तो आदन पत्तों में या मयुर पंख में विराजते है।

इन सब बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वनवासी समाज के प्रत्येक देव कामों में इस आदन के वृक्ष या इसके पत्तों का होना अनिवार्य है। उसी तरह इस वृक्ष का गाँव देवती स्थल में होना जरूरी है। बस्तर के वनवासी बाहुल्य गाँव के मध्य एक ऐसा पवित्र स्थान जहाँ गाँव के समस्त देव काम सम्पन्न होते है। उस स्थान को गाँव देवती स्थल बोलचाल की भाषा में जागारानी और गोंडी में “तलुर मुत्ते” कहतें है। यह जगह गाँव के बीच में होता है, दो चार मोहल्ले वाले गाँव के मध्य भाग में यह स्थान निश्चित किया गया होता है। इस जगह पर एक आदन का वृक्ष का होना जरूरी है। इस वृक्ष के साथ सियांड़ी की बेल लिपटना भी अनिवार्य है।

बस्तर में सियांड़ी भी बहु उपयोगी वृक्ष है, इसकी छाल से रस्सी बनाई जाती है, फल खाया जाता है तथा पत्तों का दोना पत्तल बनाकर सबका विविध उपयोग किया जाता है। इसके अलावा भी ऐसे वृक्ष होते हैं, जो छाया के लिये होते है। इस स्थान को माटी माय का स्थान माना जाता है, तलुर मुत्ते का अर्थ ढेर सारे बच्चों की माँ से है, जो गाँव के अपने सारे बच्चों का पालन करती है। इसी जगह पर साल भर चाड़ (साड़) मनाया जाता है और साल भर मिलने वाले फल एवं फसल को जोगानी (जागृत) कर देवताओं को अर्पण करने के पष्चात स्वयं ग्रहण करते है। यह कार्य आदन वृक्ष के नीचे इसी जागा रानी में ही सम्पन्न होता है।

बस्तर के लोगों के द्वारा इस वृक्ष में औषधीय गुण होने के कारण इसका उपयोग कई तरह के बीमारियों में करते हैं। इस वृक्ष के सभी अवयव छाल, तना, पत्ता, और फूल सभी का उपयोग दवाई के रूप में किया जाता है। साजा वृक्ष के तने के निचले भाग में एक प्रकार का काला द्रव रिसता है, जिससे वह जला हुआ दिखता है उसके उपर के छाल का काढ़ा बनाकर जिन्हें पेट में जलन रहता है, उसे पिलातें है। अलसर की यह अचूक दवा है। आँत के घाव में इसके काढ़ा का लेप चढ़ाकर घाव को सुखाया जाता है। इसकी छाल और पत्तों को पीस कर पुराने घाव में लेप करते है, यह बहुत ही लाभकारी होता है। इसी तरह इसके छाल को बारिक पीस कर छान लिया जाता है और इसे किसी तेल के साथ बेंवची (दाद या एक्जिमा) में लगाने पर वह बहुत जल्दी ठीक होता है।

इसका उपयोग ग्रामीण खून की कमी एनिमिया के लिये भी करते हैं। नदी किनारे के साजा वृक्ष प्रायः सफेद होते हैं, उसके तने को उबाल कर काढ़ा बनाकर मरीज को पिलाया जाता है और बचे हुये काढ़े को मरीज के सिर में डाला जाता है। जिससे उसके स्वास्थ्य में सुधार होता है। इसी तरह ग्रामीण महिलायें जो बच्चों को स्तनपान कराती हैं, उन्हें इसमे तकलीफ होने से फूल और पत्तों का पीस कर स्तन में लेप करती हैं जिससे कठोरता कम होती है ओर दर्द नहीं होता। इसके बीज से जो पाँच पँखों वाला होता है, से अनेक दवाईयाँ बनाई जाती है। जिसका उपयोग सिरहा लोग करते हैं, इसकी जानकारी वे केवल अपने शागिर्दों को ही देतें है।

बस्तर के ग्रामीण क्षेत्र में एक प्रकार की तांत्रोक्त क्रिया की जाती है, जिसे “हेल्ले” कहते हैं। इसे हम काला जादू भी कह सकते हैं। इसमें एक स्वस्थ्य मनुष्य के पैर के नीचे की मिट्टी या सिर के बाल से तंत्र क्रिया की जाती है। जिससे वह दिन-ब-दिन सूख कर काँटा होता जाता है। उसकी चित्किसा एवं स्वास्थ्य प्राप्ति के जब सारे उपाय खत्म हो जाते हैं तब देव पुछाया जाता है।

देव बताता है कि इसे हेल्ले ले गये है। कोई इसे जलन से तांत्रिक क्रिया किया हैं इसके बाद उपचार किया जाता है, जिसे हेल्ले

फिराना कहतें है। इसके लिये एक ऐसे स्थान का चयन किया जाता है, जहाँ पर आदन का पौधा उगा होता है या पौधा नहीं होने पर वृक्ष की डगाल को गाड़ दिया जाता है। फिर सिरहा देवता के माध्यम से हेल्ले का आह्वान करता है। इसे चमत्कार ही कहा जायेगा कि उस आदन के पत्तों में यदि पैर से मिट्टी उठाई गई हो तो मिट्टी या बाल काटा गया हो तो बाल आ जाता है।

इस बाल या मिट्टी को प्रभावित के सिर पर डाल कर हेल्ले फिराया जाता है। कभी कभी इस तांत्रिक क्रिया से पुतला भी बनाकर गाड़ा जाता है। तब आदन के पत्तों को चूसकर उस पुतले को निकाला जाता है और देव क्रिया से फिराया या काट किया जाता है। इस तरह इसका तांत्रोक्त वृक्ष के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। इस पूरी प्रक्रिया को "हेल्ले फिराना" कहा जाता है।

आदन का वृक्ष वनवासी समाज के साथ इस कदर जुड़ा होता है कि वह इससे चाह कर भी अलग नहीं हो पाता, जब धान की फसल पक कर कटने के लिये तैयार हो जाती है, तब वनवासी समाज "चरू" मनाता है। इसमे वह रक्षक देवताओं से फसल काटने की अनुमति माँगता है और पके हुये उपयोगी घास की जोगानी करता है। साथ ही कैना (जल कन्या) जिसका वास पानी में माना जाता है, कोडो (लड़के की पवित्र आत्मा) तथा राव बाबा की विधिवत पूजा कर उनका उपकार मानता है।

चरू मनाने के लिये एक दण्ड के लोग जिनका खेत गाँव के एक ओर स्थित होता है वे सब एक निश्चित स्थान पर तय शुदा दिन लाली, सुपारी, चावल चियाँ (मुरगी का बच्चा) चूड़ी-फुन्दड़ी, अण्डा आदि पूजा का सामान लेकर इकट्ठा होकर सभी देवों को प्रसन्न करने के लिये विधिवत पूजा करते है। राव बाबा को अण्डा की बलि, कैना को चूड़ी-फुन्दड़ी (श्रृंगार का सामान) और कोडो को चियाँ (चूजे) की बलि देकर प्रसन्न किया जाता है। इसी समय सभी किसान अपने-अपने खेत से एक-एक बार मुठ्ठी भर फसल काटते है। यही से फसल काटने की शरूआत की जाती है।

कटे हुये फसल को मिंज कर आदन के पत्तों में बाँध लिया जाता है, पत्तों की छोटे पुड़िया का चिपटी और बड़े पूड़ा को चिपटा कहते हैं। इस चिपटी को सभी अलग-अलग आदन के वृक्ष में लटका देते है। यह उनका धान बीज है। इस धान बीज को हेसांग जातरा के समय उतारा जाता है और इसे ले जाकर घर के मेयार में बाँध देते हैं। गर्मी में जब कोहका साड़ मनाया जाता है, तब गाँव देवती स्थल में माटी गांयता को देते हैं, वह सबके धान को मिलाकर पूजा करता है और फिर उन्हें वापस कर देता है। जिसे ले जाकर वे घर के सब बीज धान में मिला देते हैं। यही बीज बाद में बोया जाता है। इस बीज के लिये चयनित धान को साजा वृक्ष में लटकाने का उदेश्य होता है कि देव कृपा से बीज परिपक्व और ठोस होकर अच्छी उपज दे।

साजा वृक्ष के देव वृक्ष होने की एक कहानी भी कही जाती है। शंकर भगवान ने जब भस्मासूर को जिसके सिर पर हाथ रखोगे वह भस्म हो जायेगा" यह बरदान दिया था। असूर अपनी गन्दी सोच के कारण उस वरदान की परीक्षा करने के लिये शंकर भगवान के सिर पर हाथ रखना चाहता है और शंकर जी भागते हैं, भागते हुये वे एक घने वन में पहुँचते है, वहाँ उन्हें एक वृक्ष की खोह दिखलाई देती है और भगवान शिव अपने सिर को उस खोह में डाल कर उल्टा लटक जाते हैं, ताकि वह असुर उनके सिर पर हाथ न रख पाये। इस संकट से उन्हें विष्णु भगवान बचाते हैं।

मोहनी स्त्री का रूप धर कर असूर के साथ नृत्य करते हैं और एक बार नृत्य में ऐसी मुद्रा बनाते हैं कि हाथ सिर पर होता है। असूर भी ऐसा ही करता है और भस्म हो जाता है। शंकर भगवान को वृक्ष के खोह से निकाला जाता है। यह वृक्ष साजा का था जिसमें छूपकर भगवान ने अपनी जान बचाई थी, इसलिये इसे देव वृक्ष माना जाता है और इस वृक्ष से निकलने के बाद शंकर भगवान के शरीर का सारा भभूत उल्टा लटके होने के कारण बाल में चला जाता है और बाल सफेद हो जाता है, जिससे वे बूढ़े लगते हैं, तब उन्हें विष्णु भगवान बूढ़ादेव नाम देते हैं और कहते हैं कि आपको वनवासी समाज इसी नाम से, इसी रूप में पूजा करेगा। भले ही यह पौराणिक कहानी हो पर यह वनवासी समाज से जुड़ता है। यह कहानी ताड़ के पत्तों में लिखे ओड़िया भागवत पुराण में भी इसी प्रकार वर्णित है, जो इसे प्रमाणित करती है।

साजा के वृक्ष को देखने से लगता है कि उसके तने को जलाया गया है। वनवासी समाज में इस तरह से साजा वृक्ष के दिखने के पीछे एक कथा कही जाती है। वनवासियों के आदिदेव लिंगो देवता जिन्हे शंकर भगवान का नटराज रूप माना जाता है,

जिन्हें वनवासी समाज लोक गीत, लोक नृत्य, लोक वाद्य सिखाने वाला देवता मानता है और वनवासी समाज अपने सबसे महत्व के स्थल घोटुल में स्थापित करता है, के द्वारा अपने बचाव में इन वृक्षों पर लिपटे थे।

एक किंवदंती के अनुसार लिंगो देव सात भाईयों में सबसे छोटे थे। वे हर समय संगीत साधना में लीन रहा करते थे। उनकी भाभियाँ उनके संगीत में इतनी खो जाया करती थी कि वे अपना सब काम भूल जाया करती थी। दोपहर को उनके पति अपनी पत्नियों का खाना लेकर आने का इन्तजार करते और वे लिंगों के संगीत में खोई रहती। यह रोज का किस्सा था, भाई लोग हर दिन भूखे रहते। भाईयों ने सोचा लिंगों की संगीत साधना इसकी पत्नी आने से बन्द हो जायेगी सोच कर उनका विवाह कर देते हैं। संगीत से लिंगो देवता का अटूट रिश्ता होता है, वे साधना नहीं छोड़ते, नाराज भाईयों के द्वारा उन्हें घर से निकाल दिया जाता है। लिंगो देवता को उस गाँव में कोई सहारा नहीं देता, वे अपनी पत्नी के साथ गाँव से निकल जाते हैं।

दूसरे गाँव में पहुँचने पर उनके सामने खाने की समस्या आती है, वे एक किसान के कोठार (खलिहान) में जाते हैं, किसान से धान मिंजाई के बाद धान की भूसी बची होती है उसे माँगते हैं और भूसी से धान निकालने का चमत्कार करते हैं। लिंगो देवता बहुत जल्दी अपने चमत्कारों से प्रसिद्धी पाते हैं, उनकी प्रसिद्धी की खबर उनके भाईयों को मिलती है, तो वे जल-भून जाते हैं और लिंगों देवता को खत्म करने के उपाय करते हैं।

एक रात लिंगों देवता के घर के चारो ओर लकड़ी का ढेर लगाकर उसमें आग लगा देते हैं, ताकि वे जल के मर जायें। लिंगों देव के भाई देखते हैं कि वे आग के बीच में अपना वाद्य बजाते हुये निकले है। उनके शरीर में आग लगा हुआ होता है, वे जिन-जिन वृक्षों को उस समय लिंगों देवता ने पकड़ा था, वे सब जले हुये जैसे लगते हैं। ये वृक्ष हैं साजा (आदन), तेन्दू और कर्रा, इन सब वृक्षों का वनवासी समाज में काफी महत्व है। यहाँ से वे सीधे सेमूल गाँव की पहाड़ी में वास करते हैं। आज भी इस जगह पर ये सभी वृक्ष मौजूद हैं। यह स्थान आमा बेड़ा अन्तागढ़ मार्ग पर है और आदिवासियों के लिये किसी तीर्थ के समान है।

प्रकृति पूजक वनवासी समाज का हर क्रिया-कलाप अपने तीज-त्यौहार से इस कदर जुड़ा है कि साल भर इन्हें मनाने के बाद भी खत्म नहीं होता। वनवासी समाज के लिये साजा (आदन) का एक-एक वृक्ष चारो ओर किसी देवता की तरह खड़े हैं और वनवासी समाज कदम कदम पर इनके प्रति श्रद्धा से सिर झुकाता जाता है।